International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 10-05-2025, Accepted: 09-06-2025, Published: 24-06-2025
Volume 7, Issue 1, 2025, Page No. 24-27

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण : एक अध्ययन

कविता चौधरी
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, विद्या संबल योजना, राजकीय कन्या महाविद्यालय बायतु, बालोतरा राजस्थान, भारत

सारांश
हिन्दी नवजागरण से अभिप्राय प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद भारत के हिन्दी प्रदेशों में आये राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक जागरण से है। हिन्दी–नवजागरण की सबसे प्रमुख विशेषता हिन्दी–प्रदेश की जनता में स्वातंत्र्य–चेतना का जागृत होना है। इसका पहला चरण स्वयं 1857 का विद्रोह था। इसका दूसरा चरण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से शुरू हुआ और तीसरा चरण महावीर प्रसाद द्विवेदी से शुरू हुआ। भारतेंदु हरिश्चंद्र के उदय के साथ हिंदी में एक नए युग का आरंभ हुआ,यह मान्यता तो बहुत पहले से प्रचलित रही है। किंतु इस नए युग को 'नवजागरण' नाम देने का श्रेय हिंदी में डॉ. रामविलास शर्मा को है। 'महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिंदी नवजागरण' नामक पुस्तक के द्वारा उन्होंने 'नवजागरण' की नहीं बल्कि 'हिंदी नवजागरण' की संकल्पना प्रस्तुत की।

मूल शब्दः नवजागरण, महावीर प्रसाद द्विवेदी, हिंदी नवजागरण, बंगाल नवजागरण।

महावीर प्रसाद द्विवेदी हिंदी के पहले लेखक थे, जिन्हें जनता ने आचार्य की उपाधि दी। वे शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य आदि की तरह न तो किसी मत के प्रवर्तक थे और न किसी महाविद्यालय के प्रधान अध्यापक। उन्होंने आचार्य की कोई परीक्षा भी पास नहीं की थी। फिर जनता ने उन्हें इस आचार्य विशेषण से क्यों नवाजा ? गुरु, मत–प्रवर्तक आदि कोषगत अर्थों के साथ उसका अर्थ असाधारण पंडित भी होता है और पूज्य पुरुष भी। इसी के साथ आचार्य का एक अर्थ आचरणीय भी होता है– ऐसा व्यक्ति जिसका अनुसरण किया जाए। लगता है कि जनता ने इसी अर्थ में उन्हें आचार्य की उपाधि दी। वे असाधारण विद्वान और पूज्य पुरुष तो थे ही, ऐसे आचरणीय भी थे, जिनका लोगों ने अनुसरण किया । उनके बहुआयामी व्यक्तित्व में आचार्यत्व की जो आभा है, उसका गहरा सम्बन्ध हिंदी नवजागरण से है। हिंदी नवजागरण की जो चेतना उन्हें विरासत में भारतेंदु युग से मिली थी, उसे उन्होंने स्वाधीनता और स्वदेशी का मजबूत आधार देकर और प्रखर बना दिया। आचार्य उनके इसी ऐतिहासिक कार्य का जनता द्वारा किया गया लोक सम्मान था। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अनेक विधाओं में रचना की। कविता, कहानी, आलोचना, पुस्तक समीक्षा, अनुवाद, जीवनी आदि विधाओं के साथ उन्होंने अर्थशास्त्र, विज्ञान, इतिहास आदि अन्य अनुशासनों में न सिर्फ विपुल मात्रा में महत्त्वपूर्ण लिखा, बल्कि अन्य लेखकों को भी इस दिशा में काम करने के लिए प्रोत्साहित किया। महावीर प्रसाद द्विवेदी सिर्फ कविता, कहानी, आलोचना आदि को ही साहित्य मानने के विरुद्ध थे। वे अर्थशास्त्र, इतिहास, पुरातत्व, समाजशास्त्र आदि विषयों को भी साहित्य के ही दायरे में रखते थे। असल में स्वाधीनता, स्वदेशी और स्वावलंबन को गति देने वाले ज्ञान–विज्ञान के तमाम आधारों को वे आंदोलित करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने सिर्फ उपदेश नहीं दिया, बल्कि मनसा, वाचा, कर्मणा स्वयं लिखकर दिखा दिया। इसलिए उनके लिखे हुए को स्थायी और शाश्वत साहित्य के अपने तराजू से तौलने वाले आलोचक भूल गए कि द्विवेदी जी किसी एक विधा के लेखक नहीं हैं। उनका युगांतरकारी व्यक्तित्व अनेक प्रकारों से बना था। हिंदी नवजागरण की एक बड़ी चिंता हिंदी परिसर को साहित्य के साथ अन्य ज्ञानानुशासनों के मौलिक लेखन से समृद्ध करने की थी। इस अर्थ में हिंदी नवजागरण के सबसे बड़े योद्धा महावीर प्रसाद द्विवेदी थे। उनके इस रूप का सबसे बड़ा प्रमाण उनकी विख्यात पुस्तक 'सम्पतिशास्त्र' है। महावीर प्रसाद द्विवेदी ने माधव राव सप्रे, महामहोपाध्याय रामावतार शर्मा और चंद्रधर शर्मा गुलेरी जैसे अपने समकालीन विद्वान लेखकों को याद किया है। इसलिए कि ये सभी द्विवेदी जी की तरह बहुभाषाविद्, बहुज्ञ और विज्ञान एवं वैज्ञानिक दृष्टि को महत्व देने वाले लेखक थे। इन्हीं के प्रयासों से हिंदी में नवजागरण संभव हो सका। द्विवेदी युग के बाद हिंदी में साहित्यिक विधाओं का तो विकास हुआ किन्तु हिंदी में ज्ञान–विज्ञान का अंतरानुशासनिक परिसर वैसा नहीं बन सका जैसा सपना द्विवेदी जी ने देखा था। उनकी परंपरा में जिन लेखकों को याद किया जा सकता है, उनकी संख्या बहुत अधिक नहीं है। राहुल सांकृत्यायन, हजारी प्रसाद द्विवेदी, भगवतशरण उपाध्याय और डॉ. रामविलास शर्मा जैसे थोड़े नाम हैं, जिनके लेखन की दुनिया द्विवेदी जी की तरह विस्तृत है ।

हिन्दी नवजागरण की अवधारणा ज्ञान के विशेष पैराडाइम के अन्तर्गत, जिसे सुविधा के लिए औपनिवेशिक आधुनिकता का पैराडाइम कह सकते हैं, गढ़ी गयी थी। आधुनिकता की ज्ञानमीमांसा के निष्कर्ष पर ही समस्याएँ चिन्हित की गयीं और उसी के अनुरूप समाधान सुझाए गए। इक्कीसवीं सदी तक आते–आते ज्ञान का यह पैराडाइम बदल गया। पैराडाइम बदलते ही समस्याओं की पहचान और उनके समाधान के स्वरूप में भी बदलाव आ गया। उन्नीसवीं सदी में जन्मी विचारधाराओं को यथावत दुहराकर न तो आज की समस्याओं की सम्यक् पहचान संभव है और न ही उनका समाधान। इसलिए हिन्दी नवजागरण की परिकल्पना और उसके द्वारा सुझाए गए विकल्पों पर नये सिरे से विचार करने की जरूरत है। क्योंकि पुराने पैराडाइम के तहत दिये गये जो उत्तर पहले सही लगते थे, वे अब कारगर नहीं लगते। इसी परिप्रेक्ष्य में हिन्दी नवजागरण की अवधारणा और उससे जुड़ी समस्याओं को नये सिरे से समझने की शुरूआती कोशिश इस लेख में की गयी है। रामविलास शर्मा ने लिखा है कि हिन्दी नवजागरण में अंग्रेजी शिक्षा और पश्चिमी ज्ञान की कोई उल्लेखनीय भूमिका नहीं रही। थोड़ी रियायत देते हुए उन्होंने ये जरूर जोड़ दिया है कि अंग्रेजी साहित्य की मानवतावादी और प्रगतिशील परम्परा भी रही है और उससे सीखने में कोई हर्ज नहीं। लेकिन आधुनिक हिन्दी साहित्य की गम्भीरता से पड़ताल करने पर ये बात स्पष्ट हो जाती है कि उसकी मूल प्रेरणा और आदर्श अंग्रेजी साहित्य ही रहा है। ज्यादातर आधुनिक हिन्दी साहित्य पश्चिम से प्रेरणा लेते हुए और उसी के मानदण्ड पर लिखा गया है। कहने वाले चाहें तो कह सकते हैं कि ये अंग्रेजी साहित्य की नकल है। 19वीं सदी के हिन्दी नवजागरण का सबसे ज्यादा लोकप्रिय और सर्वप्रिय

अभियान उर्दू के मुकाबले नागरी लिपि में लिखी नई चाल की हिंदी (जिसे भारतेंदु मंडल के लेखकों ने 'आर्य हिन्दी' कहा है) की प्रतिष्ठा से सम्बन्धित था। किसी हद तक शिक्षा प्रसार के कार्यक्रम के अलावा शायद हिन्दी नवजागरण का यह अकेला कार्यक्रम था जिस में आन्दोलन की ऊर्जा थी।

भारतेन्दु युगीन हिन्दी नवजागरण की एक बड़ी समस्या यह है कि इसमें कथित उर्दू परम्परा में लिखे गये साहित्य की चर्चा ही सिरे से गायब है। हिन्दी नवजागरण की शुरुआत ही भारतेन्दु के इस कथन से मानी गयी है कि 1873 में हिन्दी नये चाल में ढली। उर्दू को आप हिन्दी की शैली मानें या उसकी परिकल्पना को ही अस्वीकार करें, लेकिन सच्चाई है कि हिन्दी के नये चाल में ढलने से पहले उर्दू में साहित्य लिखने का सिलसिला शुरू हो चुका था। इसलिए फारसी लिपि या उर्दू में फारसी–अरबी के शब्दों को जबर्दस्ती ठुँसने की आलोचना करने के बावजूद हिन्दी जाति के नवजागरण की चर्चा से उर्दू में लिखे गये साहित्य का आप बाहर नहीं कर सकते। ऐसा करने से उसकी साम्प्रदायिक परिणति की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं और अन्ततः वही हुआ भी। मुख्य बात यह है हिन्दी क्षेत्र की व्यापकता और भाषायी जटिलता के कारण यहाँ ऐसी स्थितियाँ उत्पन्न हुई कि तेलुगू, बांग्ला या मराठी की तरह हिन्दी का कोई एक रूप सुनिश्चित करना और बाकी रूपों को बाहर कर देना सभी को स्वीकार्य निर्णय नहीं बन पाया। फारसी और फिर उर्दू की परम्परा के विकास के कारण हिन्दी के ही कई रजिस्टर बन गये। कई बार तो एक ही समय में अलग–अलग परम्परा से जुड़े लोग इन रजिस्टरों का अलग–अलग ढंग से उपयोग करते दिखायी पड़ते हैं। समस्या तब उत्पन्न होती है जब हम इनमें से किसी एक रूप के आधार पर हिन्दी का स्वरूप स्थिर करने की कोशिश करते हैं। हिन्दी, हिन्दुस्तानी और उर्दू के बीच खींचतान के समूचे इतिहास को इसी परिप्रेक्ष्य में समझना चाहिए। भारतेन्दु युगीन हिन्दी नवजागरण की समस्या यह है कि उसने हिन्दी का एक सही रूप तय कर बाकी रूपों को प्रकारान्तर से अवैध घोषित कर दिया और उनके बारे में किसी भी प्रकार के चिन्तन–अध्ययन का ही निषेध कर दिया। उर्दू परम्परा में लिखे गये साहित्य को हिन्दी नवजागरण के दायरे से बाहर कर देने के बावजूद भारतेन्दु को इस बात का एहसास था कि उर्दू शायरी की परम्परा से भिन्न खड़ी बोली हिन्दी में कविता लिख पाना आसान नहीं होगा। विद्वानों को इस बात पर विचार करना चाहिए कि हिन्दी को उर्दू से अलगाने के बावजूद स्वयं भारतेन्दु उर्दू में रसा नाम से कविता क्यों लिखते थे। यही नहीं, इस बात पर भी नये सिरे से विचार किया जाना चाहिए कि नई चाल की हिन्दी के समर्थक भारतेन्दु अपनी ज्यादातर कविताएँ ब्रज भाषा में क्यों लिखते हैं। खड़ी बोली में तो उन्होंने अमीर खुसरो के वजन पर सिर्फ मुकरिया ही लिखी। एक खास तरह की हिन्दी की वकालत करने के बावजूद भारतेन्दु के लेखन में उर्दू और ब्रज भाषा की उपस्थिति बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि गम्भीरता से विचार किया जाये तो इससे हिन्दी क्षेत्र के भाषायी मानचित्र की जटिलता को समझने में मदद मिल सकती है।

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल की शुरुआत में पहले–पहल भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने साहित्य के माध्यम से जन–जागरण और हिन्दी भाषा के निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। भारतेन्दु के समय में हिन्दी गद्य की भाषा लगभग बन चुकी थी, पद्य में भी उसका थोड़ा–बहुत प्रयोग किया जाने लगा था। भारतेन्दु के प्रोत्साहन और प्रेरणा से कई साहित्यकारों ने अपने–अपने ढंग से हिन्दी भाषा के निर्माण कार्य में योगदान दिया। प्रतापनारायण मिश्र, बद्री नारायण चौधरी प्रेमघन, बालकृष्ण भट्ट जैसे साहित्यकार हिन्दी का विभिन्न शैलियों में लगातार प्रयोग कर रहे थे लेकिन इसके बावजूद भी हिन्दी व्याकरण–सम्मत और मानक भाषा नहीं बन पा रही थी। ऐसी स्थिति में सन् 1903 ईस्वी में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी 'सरस्वती' पत्रिका के सम्पादक का पद संभालते हैं और हिन्दी भाषा के निर्माण का दायित्व बखूबी निभाते हैं। द्विवेदी जी का दौर नवजागरण का था। उस समय अखिल भारतीय स्तर पर अनेक सुधारवादी और पुनरुत्थानवादी आन्दोलन चल रहे थे। इन आन्दोलनों में एक ओर भारतीय इतिहास और संस्कृति की महिमा का गान था तो दूसरी ओर साम्राज्यवादी चंगुल से मुक्त होने की कामना भी। नवजागरण के उस दौर में शिक्षा का महत्व बहुत अधिक था। द्विवेदी जी इस बात को भली–भाँति समझते थे, अतः भारत की सामाजिक दशा सुधारने के लिए उन्होंने आधुनिक शिक्षा पर जोर दिया और 'सरस्वती' में लगातार ऐसे लेखों को प्रकाशित करने की मुहिम चलाई जिनमें भारत में अशिक्षा की स्थिति और उसके कारण, उनसे जुड़ी समस्याओं, विद्यालयों की कमी इत्यादि का विश्लेषण होता था। इसी सिलसिले में उन्होंने अंग्रेजों द्वारा अपनाई गई शिक्षा नीति और भेद–नीति की पोल खोलते हुए जनता को जागरूक किया। द्विवेदी जी का लक्ष्य अपने पाठकों का ज्ञानवर्धन करना था। उन्होंने 'सरस्वती' में निरंतर ऐसी सामग्री प्रकाशित की जो पाठकों को समाज और इतिहास की नई दृष्टि और दिशा प्रदान करती थी। उन्होंने 'सरस्वती' के माध्यम से हिन्दी में ऐसा सजग और सचेत पाठक वर्ग तैयार करने का संकल्प लिया जो विचार–प्रधान गद्य भी कथा और कविता जैसा रस ले सके, जो तत्कालीन भारत की परिस्थिति को अच्छी तरह समझकर अपनी एक सुचिंतित समझ बना सके। महावीर प्रसाद द्विवेदी एक ऐसे साहित्यकार थे जो बहुभाषाविद् होने के साथ ही साहित्य के इतर विषयों में भी समान रुचि रखते थे। उन्होंने 'सरस्वती' का अठारह वर्ष तक संपादन कर हिन्दी पत्रकारिता में एक महान कीर्तिमान स्थापित किया था। वे हिन्दी के पहले व्यवस्थित समालोचक थे, जिन्होंने समालोचना की कई पुस्तक लिखी थी। वे खड़ी बोली हिन्दी की कविता के प्रारंभिक और महत्वपूर्ण कवि थे। आधुनिक हिन्दी कहानी उन्हीं के प्रयत्नों से एक साहित्यिक विधा के रूप में मान्यता प्राप्त कर सकी थी। वे भाषा शास्त्री थे, अनुवादक थे, व्याकरणिक थे, इतिहासज्ञ थे, अर्थशास्त्री थे तथा विज्ञान में भी गहरी रुचि रखने वाले थे। अन्ततः वे युगान्तर लाने वाले साहित्यकार थे या दूसरे शब्दों में कहें, युग निर्माता थे। वे अपने चिंतन और लेखन के द्वारा हिन्दी प्रदेश में नव–जागरण पैदा करने वाले साहित्यकार थे। द्विवेदी जी ने लगन, निष्ठा और मनोयोग से इस दिशा में कार्य किया और सफलता भी पाई। मात्र लेखों के स्तर पर ही नहीं बल्कि एक सम्पादक के रूप में द्विवेदी जी विज्ञापन सहित कोई भी ऐसी सामग्री 'सरस्वती' में प्रकाशित नहीं होने देते थे जो पाठकों को दिग्भ्रमित करती हो। उन्नीसवीं शताब्दी के भारतीय नवजागरण को 'रिनेसांस' कहने में एक कठिनाई तो यही है कि इस युग के भारतीय विचारकों और साहित्यकारों के प्रेरणा–स्त्रोत यूरोप के पंद्रहवीं शताब्दी के चिंतक और साहित्यकार न थे। बल्कि इसके विपरीत प्रेरणा–स्त्रोत के रूप में अधिकांश विचारक उस काल के थे जिसे यूरोप में 'एनलाइटेनमेंट' का काल तथा उसके बाद का काल कहा जाता है। स्वयं बंकिम की सहानुभूति रूसो और प्रूधों के साथ थी और वे कोन्तथ, जान स्टुअर्ट मिल तथा हर्बर्ट स्पें सर से प्रभावित दिखाई पड़ते हैं। कमोबेश यही स्थिति बंगाल में राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, देरोजियो आदि की दिखती है और हिंदी में महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा रामचंद्र शुक्ल की भी। उल्लेखनीय है कि महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'सरस्वती' ज्ञान की पत्रिका कही गई है और उनका गद्य हिंदी साहित्य का ज्ञानकांड। इस प्रकार भारत का उन्नीसवीं शताब्दी का नवजागरण यूरोप के 'एनलाइटेनमेंट' अथवा 'ज्ञानोदय' की चेतना के अधिक निकट प्रतीत होता है और पंद्रहवीं शताब्दी का नवजागरण 'रिनेसांस' के तुल्य। भाषा के क्षेत्र में भारतीय नवजागरण के स्वत्व के लिए जो संघर्ष किया उसका सबसे शानदार पहलू है प्रत्येक जातीय भाषा

के विकास के साथ आपसी आदान–प्रदान के लिए एक अखिल भारतीय भाषा का विकास। बंगला नवजागरण के उन्नायकों ने, चाहे वे ब्रह्म हो या गैर–ब्रह्म सनातनी, बंगला के साथ ही हिंदी को भी बढ़ावा दिया यहाँ तक कि संस्कृत के पंडित और गुजराती दयानंद सरस्वती को संस्कृति छोड़ हिंदी में बोलने और लिखने की नेक सलाह कलकत्ता में केशवचंद्र सेन से ही मिली।

द्विवेदी जी समेत उस समय के बुद्धिजीवियों को ये बात सालने लगी कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्रवाद की परिकल्पना कैसे संभव होगी। भारत पश्चिमी राष्ट्रों से इस मायने में भिन्न था कि यहाँ कई भाषाएँ बोली जाती थीं। किन्तु सबसे ज्यादा लोगों द्वारा बोली जाने वाली भाषा के रूप में हिन्दी को खड़ा कर राष्ट्रभाषा बनने के उसके दावे को मजबूत करने के लिए ऐसी हिन्दी की परिकल्पना की गयी, जिसमें हिन्दी के विविध रूपों और तथाकथित जनपदीय भाषाओं बोलियों के लिए कोई जगह नहीं बची। इसका परिणाम ये हुआ कि भारतीय सभ्यता में भाषाओं के विकास और उनके पारस्परिक सम्बन्ध को या तो नजर अन्दाज कर दिया गया या उसको समझने का विवेक ही नहीं उत्पन्न हो पाया। यदि समूचे भारत के भाषायी मानचित्र की चर्चा न भी की जाए तो भी इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि हिन्दी प्रदेश में एक ही समय में अलग–अलग कार्यों के लिए और कभी–कभी एक ही कार्य के लिए हिन्दी के भिन्न–भिन्न 'रजिस्टर' का इस्तेमाल होता रहा है। हिन्दी प्रदेश का भाषायी स्वरूप हमेशा बहुभाषी रहा है। भाषायी स्वरूप को लेकर असहमतियाँ हो सकती हैं और होनी भी चाहिए, लेकिन उनके अस्तित्व को ही दरकिनार कर गढ़ी गई हिन्दी नवजागरण की कोई भी परिकल्पना, नेक इरादों के बावजूद, आत्मघाती और अन्ततः साम्प्रदायिक होने के लिए अभिशप्त है।

यदि भारतेन्दु युग में उर्दू की परम्परा से नई हिन्दी का सम्बन्ध–विच्छेद हुआ तो द्विवेदी युग की उपलब्धि ये है कि इस दौर में ब्रजभाषा की परम्परा से भी उसे काट दिया गया। रीति विरोधी अभियान चलाकर ये सिद्ध करने का प्रयास किया गया कि ब्रजभाषा में आधुनिक युग की संवेदना वहन करने की सामर्थ्य नहीं है। ब्रजभाषा में तो पतनशील सामंती मानसिकता की कामुक श्रृगांरिक कविताएँ ही लिखी जा सकती हैं। रीतिकालीन श्रृगांरिक कविताओं को ही नहीं, स्त्री लोकगीतों को भी विक्टोरियन नैतिकता के प्रभाव में अश्लील घोषित कर दिया गया जबकि इतिहास यह है कि आधुनिक यूरोपीय भाषाओं में भी अपनी क्लासिक साहित्य और ज्ञान को आत्मसात कर कुछ–कुछ वैसा ही साहित्य लिखा गया था जैसा रीतिकालीन कविताओं में दिखाई पड़ता है इस बात को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया कि सूर, मीरा से लेकर न जाने कितने भक्तकवियों ने इसी भाषा में कविताएँ लिखी हैं। रीतिकालीन दौर में भी श्रृगांरिक कविताएँ लिखने वाले कवियों से ज्यादा ऐसे कवियों की संख्या है, जिन्होंने भक्ति–प्रधान कविताएँ लिखी हैं। यही नहीं, कथित रीतिकाल के दौर में ही 60 से भी अधिक संख्या में वीरकाव्य–लिखे गए हैं। दिनों–दिन जीवन से सम्बन्धित समस्याओं पर लिखी गई कविताओं के साथ–साथ नीतिपरक कविताएँ भी इस दौर में कम नहीं लिखी गई। स्वयं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, नरोत्तमदास और जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' जैसे आधुनिक दौर के कवियों के यहाँ भी वैसी कविताएँ नहीं मिलती. जिनका रीति–विरोधी अभियान के नाम पर विरोध किया गया। असल में उर्दू के दावे को खारिज करना तो आसान था, लेकिन उर्दू के दावे को खारिज करने के बाद ब्रजभाषा के दावे को खारिज करना बहुत मुश्किल था। साहित्यिक उपलब्धि की दृष्टि से तो खड़ी बोली कहीं से ब्रज भाषा के सामने खड़ी ही नहीं होती। उर्दू को दरकिनार करने के बाद साहित्य की भाषा के रूप में व्यापकता और विस्तार की दृष्टि से भी ब्रजभाषा का दायरा खड़ी बोली के मुकाबले बहुत विस्तृत था। गुजरात से लेकर बंगाल तक ब्रजभाषा में साहित्य लिखने की परम्परा दिखायी पड़ती है। खड़ी बोली के पक्ष में दूसरा तर्क ये दिया गया कि ब्रजभाषा में गद्य का पर्याप्त विकास नहीं हुआ, लेकिन यदि उर्दू परम्परा के विकास को हिन्दी से अलग कर दें, तो उस समय तक हिन्दी में ही गद्य का कौन सा विकास दिखाया जा सकता था। ये सही है कि फोर्ट विलियम कॉलेज, ईसाई मिशनरियों और अन्य लोगों के सहयोग से उन्नीसवीं शताब्दी में हिन्दी गद्य का तेजी से विकास हुआ। जो शोध हुए हैं, उनके आधार पर ये कहना भी पूरी तरह सही नहीं है कि ब्रजभाषा में गद्य का विकास ही नहीं हुआ। सबसे पुराने व्याकरण और शब्दकोश ब्रजभाषा के ही बनाये गये और अनेक संस्कृत ग्रन्थों का ब्रजभाषा–गद्य में अनुवाद किया गया। इन सारे तथ्यों पर ध्यान देने के बाद ये बात समझ में आती हैं कि रीतिविरोधी अभियान के नाम पर वास्तव में ब्रजभाषा के साहित्यिक–वैचारिक अवदान का निषेध किया जा रहा था।

हिंदी नवजागरण को जैसे भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने बंगाल नवजागरण से जोड़ा था, वैसे ही महावीर प्रसाद द्विवेदी ने हिंदी नवजागरण को महाराष्ट्र के नवजागरण से जोड़ा। द्विवेदी जी ने सरस्वती में मराठी के प्रसिद्ध लेखक विष्णु शास्त्री चिपलूनकर, संस्कृतज्ञ वामन शिवराम आपटे, प्रसिद्ध मूर्तिकार म्हातरे, गायनाचार्य विष्णु दिगम्बर, रायबहादुर रंगनाथ नृसिंह मुधोलकर, लोकमान्य बालगंगाधर तिलक और इतिहासवेत्ता विश्वनाथ काशीनाथ राजवाड़े आदि के साथ ताराबाई, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, कुमारी गोदावरी बाई, सौभाग्यवती रखमाबाई जैसी स्त्रियों पर लेख लिखकर उनके विचार, व्यवहार, कला–साधना और संघर्ष से हिंदी पाठकों को परिचित कराया. इन प्रक्रिया में उन्होंने हिंदी नवजागरण को अधिक व्यापक और समावेशी बनाया। महावीर प्रसाद द्विवेदी भारतीय स्त्रियों की शिक्षा के पक्षधर थे। सन् 1914 ईस्वी में स्त्री शिक्षा के समर्थन में उनका एक लेख छपा था, जिसका शीर्षक था स्त्री–शिक्षा के विरोधी कुतर्को का खंडन। यह लेख उस समय की पत्रिकाओं में प्रकाशित स्त्री–शिक्षा विरोधी लेखकों का जवाब था। इस लेख का आरंभ इस तरह होता है. "बड़े शोक की बात है, आजकल भी ऐसे लोग विद्यमान हैं जो स्त्रियों को पढ़ाना उनके और गृह–सुख के नाश का कारण समझते हैं। और, लोग भी ऐसे वैसे नहीं, सुशिक्षित लोग–ऐसे लोग जिन्होंने बड़े–बड़े स्कूलों और शायद कालेजों में भी शिक्षा पाई है, जो धर्मशास्त्र और संस्कृत के ग्रन्थ साहित्य से परिचय रखते हैं, और जिनका पेशा कुशिक्षितों को शिक्षित करना, कुमार्गगामियों को सुमार्गगामी बनाना और अधार्मिकों को धर्मतत्त्व समझाना है।" महावीर प्रसाद द्विवेदी हिन्दी के पहले साहित्यकार थे, जिनको 'आचार्य' की उपाधि मिली थी। इसके पूर्व संस्कृत में आचार्यों की एक परम्परा थी। मई, 1933 ई. में नागरी प्रचारिणी सभा ने उनकी सत्तरवीं वर्षगांठ पर बनारस में एक बड़ा साहित्यिक आयोजन कर द्विवेदी का अभिनंदन किया था एवं उनके सम्मान में 'द्विवेदी अभिन्न ग्रंथ' का प्रकाशन कर, उन्हें समर्पित किया था। हिंदी साहित्य की सेवा करने वालों में द्विवेदी जी का विशेष स्थान है। द्विवेदी जी की अनुपम साहित्य–सेवाओं के कारण ही उनके समय को द्विवेदी युग के नाम से पुकारा जाता है। द्विवेदी जी ने खड़ी बोली को कविता के लिए विकास का कार्य किया। उन्होंने स्वयं भी खड़ी बोली में कविताएं लिखीं और अन्य कवियों को भी उत्साहित किया। श्री मैथिली शरण गुप्त, अयोध्या सिंह उपाध्याय जैसे खड़ी बोली के श्रेष्ठ कवि उन्हीं के प्रयत्नों के परिणाम हैं। नवजागरण काल में हिंदी को जनमानस में स्थापित करने के जो प्रयास किए गए उन्हें आजादी के बाद एक तरह से उलट दिए गए। इस संदर्भ में आर्य समाज की सुधारवादी लहर, किसानों और मजदूरों के आंदोलन, आदि के माध्यम से राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में तेजी आई। दयानंद सरस्वती और बाल गंगाधर तिलक और महात्मा गांधी आदि ने

हिंदी को प्रमुखता दिलाने के लिए, उसे भविष्य में स्वतंत्र भारत की राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बनाने के लिए, स्वयं हिंदी सीखकर उसे अपनाया और देश भर में उसे प्रचारित किया। दयानंद सरस्वती ने 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी में कि न की गुजराती अथवा अंग्रेजी में। मद्रास के सी वी राजगोपालाचारी ने हिंदी को मातृभाषा सदृश अपनाया और मद्रास में प्रथम हिंदी माध्यम का विद्यालय खोला, जिसे गांधीजी ने सराहा और इसे समस्त देशवासियों के सम्मुख प्रेरणा स्त्रोत के रूप में प्रस्तुत किया। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी आधुनिक युग के हिंदी नवजागरण के पुरोधा माने जाते हैं।

उपसंहार

भारतीय नवजागरण आंदोलन का सूत्रपात बंगाल में हुआ और इसके सूत्रधार थे राजा राममोहन राय। इस आंदोलन ने भारत की बहुभाषिक, संस्कृति–बहुल भौगोलिकता और सामाजिकता में भावनात्मक स्तर पर समूचे उपमहाद्वीप को एकता के सूत्र में बांधने का प्रयास किया। प्राचीन काल से भारत एक बहुसांस्कृतिक देश रहा है। यहाँ एक ही महान परंपरा न होकर कई महान परंपराएँ विकसित हुई, इनके बीच टकराहट, अंतःक्रिया और आदान–प्रदान का इतिहास उतना ही पुराना है, जितनी पुरानी स्वयं भारतीय संस्कृतियाँ हैं। भारतीय संस्कृति एक विराट समष्टिगत संस्कृतियों के मेल से निर्मित समुच्चय है। उसमें अखंडता है, पर एकरूपता नहीं है। भारतीय भाषाओं का पुनरुत्थान और उनको अपनी जमीन पर पुनः प्रतिष्ठित करने का संघर्ष भी नवजागरण आंदोलन का महत्त्वपूर्ण उपक्रम रहा है। नवजागरण आंदोलन के अंतर्गत हिंदी को स्वाधीन भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने के उद्देश्य भी प्रमुख रूप से परिलक्षित होता है। हिंदी एवं इतर भारतीय भाषाओं के प्राचीन वैभव एवं महानता को पुनर्जीवित करने के उद्यम को ही हिंदी नवजागरण की संज्ञा दी गई। स्वाधीनता से पूर्व ही हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में सशक्त एवं सक्षम बनाने के लिए महावीर प्रसाद द्विवेदी ने अथक प्रयास किए। हिंदी के सशक्तिकरण के लिए उन्होंने 'सरस्वती' पत्रिका को माध्यम बनाया। राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रचारक महावीर प्रसाद द्विवेदी अन्य भारतीय भाषाओं से देशवासियों को प्रेम करना सिखाते हैं। भारतीय नवजागरण अथवा पुनर्जागरण आंदोलन के लक्ष्य व्यापक सामाजिक सुधार के थे।

संदर्भ सूची

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनका युग–डॉ. उदयभानु सिंह।
2. आचार्य द्विवेदी–बी. आर. धर्मेन्द्र।
3. हिन्दी साहित्य कोश–धीरेन्द्र वर्मा।
4. हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास–रामा शंकर।
5. महावीर प्रसाद द्विवेदी और हिन्दी नवजागरण–डॉ. रामविलास शर्मा